International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol.10 No.2 November – December 2022

हिंदी उपन्यास साहित्य में वैश्वीकरण एवं भारतीय संस्कृति पर प्रभाव

प्रा. डॉ. सविता कृ. पाटील

स. ब. खाड़े महाविद्यालय, कोपार्डे, तह. करवीर, जिला. कोल्हापुर

Corresponding Author - प्रा. डॉ. सविता कृ. पाटील

DOI - 10.5281/zenodo.7620173

संस्कृति मानव समाज का अविभाज्य अंग है । मानव को मानवेतर प्राणियों से अलगानेवाला लक्षण संस्कृति है। मनुष्य अपनी बुद्धि के बल पर कुछ न कुछ नया निर्माण करता रहता है। समाज में रहते हुए मनुष्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में अपनी संस्कृति सीखता रहता है। कोई उस संस्कृति को जन्म से लेकर नहीं आता तो व्यक्ति आसपास के परिवेश से संस्कृति प्राप्त करता है । संस्कृति याने किसी भी समाज का जीवन जीने का तरीका। व्यक्ति का सामाजिक व्यक्तित्व बनाने, उसे आकार देने का काम संस्कृति करती है। वैश्वीकरण के कारण विश्व के सभी क्षेत्रों में परिवर्तन हो रहा है। उसके लिए संस्कृति भी अपवाद नहीं है। वैश्वीकरण का व्यापक प्रभाव हमारी संस्कृति पर होने लगा है। अगर हम वैश्विक समाज की ओर बढ़ना चाहते हैं तो हमें एक और संस्कृति के दायरे में रहना होगा और दूसरी ओर हमें अपनी संस्कृति को लचीला और उदार बनाना होगा।

मूल शब्द - संस्कृति, वैश्वीकरण, साहित्य, नैतिकता, संस्कार, जीवन, उपभोक्तावाद, वृद्ध, मूल्य

भारतीय संस्कृति प्राचीन संस्कृति है। हमारी संस्कृति के लिए एक परंपरा है । महान आदर्श, संस्कार, मानवीय मूल्यों के बलबूते पर हमारी संस्कृति खड़ी है। आने वाली पीढ़ी को मार्गदर्शन करते हुए उसे सही दिशा की ओर ले जाने का सामर्थ्य इसमें है। सत्य, अहिंसा, दया, क्षमा, शांति, करुणा, त्याग, सच्चाई, बलिदान, नैतिकता आदि जैसे शाश्वत मूल्यों को हमारी संस्कृति में महत्व दिया गया है। हमारी संस्कृति की नींव इन्हीं मूल्यों पर थी, लेकिन आज हमारा समाज, संस्कृति बदल रही है। वैश्वीकरण के कारण पूरा समाज प्रभावित होने लगा है। व्यक्ति विश्व मानव के रूप में बदल रहा है। ज्ञानेश्वर जी की उक्ति है, ‘ हे विश्वची माझे घर’ के अनुसार

पूरा विश्व एक परिवार में तब्दील होने लगा है। 'ग्लोबल विलेज' या विश्वग्राम की संकल्पना सामने आने लगी है। उसका अच्छा-बुरा परिणाम हमारे संस्कृति पर हो रहा है। इन सभी का चित्रण साहित्य के माध्यम से चित्रित होने लगा है। साहित्यकार सामाजिक जीवन का व्यापक एवं सर्वांगीण चित्रण अपने साहित्य के द्वारा कर रहा है।

वैश्वीकरण ने आज के उपन्यास साहित्य में काफी परिवर्तन आ गया है। समाज, राजनीति, धर्म, संस्कृति, कला, विज्ञान आदि सभी का एक साथ चित्रण उपन्यास के जरिए होने लगा है। समाज और जीवन के सभी क्षेत्रों की व्यापक अभिव्यक्ति उपन्यासकार कर रहा है। वह अपने परिवेश से समयानुकूल तथ्यों को खोजने का प्रयास कर रहा है । उनकी अभिव्यक्ति अपने उपन्यास के माध्यम से कर रहा है।

सन 1990 के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था में काफी गिरावट आई। देश में आए दिन आर्थिक संकट की भीषणता बढ़ने लगी। इस संकट से निपटने के लिए तत्कालीन नरसिंहा राव सरकार ने अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से कर्ज लेने के लिए आवेदन किया। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की ओर से कुछ शर्तों को पूरा करने के बाद कर्ज का पैकेज प्रदान किया जाता था। इस पैकेज के प्रधान अंग थे - उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण। नई आर्थिक नीति के अनुसार देश में उद्योग, व्यापार, बँकिंग आदि सभी क्षेत्रों में आर्थिक सुधार लागू किए। पूरे भूमंडल के सुख- दु:ख, लाभ हानि को एक करने की प्रक्रिया होने लगी । संपर्क, सूचना एवं संचार क्षेत्रों में होने वाले क्रांतिकारी परिवर्तन से इसमें और गति आ गई।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास के साथ औद्योगिक समाज की आधुनिक समाज में रूपांतरण की प्रक्रिया आरंभ हुई। औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया तेज होने के साथ पश्चिम के औद्योगिक देशों के लिए कच्चे माल एवं बाजार की जरूरत महसूस होने लगी। परिणामस्वरूप औद्योगिकीकरण एवं पश्चिमीकरण का विकास हुआ। पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से अपने देश की सामाजिक संस्कृति के संरचनाओं में बदलाव आने लगा। स्थानीय समाज पश्चिमी सभ्यता के रंग में रंगने लगा। वैश्वीकरण की परिभाषा करते हुए कृष्णादत्त पाली वाल लिखते हैं, "उपग्रहीय टेलीविजनों की ताकद के इस्तेमाल से एक ग्लोबल कल्चर या भूमंडलीय संस्कृति को जन्म देना। अमरीकी संस्कृति की श्रेष्ठता को हर कीमत पर स्थापित करना, उसे बढ़ावा देना और तर्कों-संस्थानों के द्वारा उसकी विशिष्टताओं को रेखांकित करना।" [1]

अमरिकी संस्कृति का अनुकरण विश्व में होने लगा और उसे बढ़ावा देने का कार्य प्रौद्योगिकी ने कर दिया।

वैश्वीकरण ने 1980 के बाद के हिंदी साहित्य को बाहर- भीतर से परिवर्तित कर दिया। कथाबीज, संवेदना, संवेदना से उत्पन्न अनुभूति को पूर्णत: बदल दीया। वैश्वीकरण का व्यापक प्रभाव हिंदी उपन्यास साहित्य पर हो रहा है। भारतीय संस्कृति के मूल्य दिन-ब-दिन गंभीर स्वरूप धारण करते जा रहे हैं। एक और विश्व ग्राम बनता जा रहा है परंतु दूसरी ओर पड़ोसी पड़ोसी की तरफ देख नहीं पा रहा है। कालिदास ने कहीं उक्ति के अनुसार जो पुराना है, वह सब अच्छा और जो नया है, वह सब बेकार ऐसी बात नहीं। भूमंडलीकरण के कारण एक ओर परंपरागत मूल्यों का ऱ्हास हो रहा है वहाँ दूसरी ओर यूरोपीय संस्कृति के अच्छे मूल्यों का प्रभाव हमारी संस्कृति पर पडने लगा है। "वैश्वीकरण का समाज व संस्कृति पर उभयपक्षीय प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। एक ओर तो यह विभिन्न समाजों व संस्कृतियों को एक- दूसरे के नजदीक आता है और उनमें परस्पर सहयोग का विकास करता है, जबकि दूसरी ओर उनमें दूरियाँ बढ़ाता है और उनके बीच संघर्ष पैदा करता है।"[2] हमारी संस्कृति के मूल्यों में पाश्चात्य संस्कृति के अच्छे मूल्यों का समन्वय निर्माण करने की जरूरत है। बाजारवाद, उपभोक्तावादी, संस्कृति प्राचीन सभ्यता के टूटते मूल्य, नए मूल्यों का समायोजन आदि सभी को उपन्यास अभिव्यक्ति मिल रही है।

वैश्वीकरण में दूर रहने वाला, समाज, राष्ट्र निकट आ रहा, यह सच है। परंतु हमारे माता-पिता को वृद्धाश्रम का रास्ता पकड़ना पड रहा है। माता-पिता के लिए भारतीय संस्कृति में गौरवपूर्ण स्थान है। 'मातृ देवो भव', 'पितृ देवो भव' कहकर माता-पिता को देवता का स्थान दिया गया है। भारत में नई आर्थिक नीति के कारण देश में सरकारी, सार्वजनिक एवं सहकारी क्षेत्रों की सेवाओं को धीरे-धीरे हस्तांतरित किया गया। परिणामस्वरूप नीजी क्षेत्र में रोजगार के अनेक अवसर निर्माण हो गए। युवा पीढ़ी रोजगार के लिए घर-बार छोड़ कर नौकरी के स्थान पर जाकर रहने लगी। आज के जमाने में परिवार त्रिकोणी बनता जा रहा है। माता-पिता और एक संतान, अगर वह भी विदेश में जाकर बसी तो माता-पिता का ख़याल रखने वाला कोई नहीं होता। बच्चों द्वारा उन्हें पैसे तो दिए जाते हैं, परंतु प्यार,अपनत्व, ममत्व से उन्हें पूछने वाला कोई नहीं होता। परिणामस्वरूप उन्हें यातनामय जीवन जीना पड़ता है। माता-पिता बचपन में बच्चों की परवरीश करते हैं और वृद्धावस्था में बच्चों को

माता-पिता की लाठी बनना यह हमारी संस्कृति है। भारत में पाश्चात्यों की तरह बच्चों को चिल्ड्रन होम या होस्टेल में नहीं रखते। हमारी संस्कृति में व्यक्ति का नहीं परिवार का विचार किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति का सुख दु:ख यहाँ परिवार का सुख दु:ख रहता है। माता पिता के लिए पैसों की नहीं, प्यार की आवश्यकता रहती है। लेकिन आज पैसे फेंकने से काम हो जाता है, यह मनोवृति बलवती हो रही है। बढती आमदनी के कारण जीवन शैली बदल रही है

शहर में जगह की कमी के कारण बच्चे वृद्धों को अपनाने के लिए तैयार नहीं होते। परिवारों को के बाहर और भीतर वरिष्ठ नागरिकों के प्रति उपेक्षा और उदासीनता का भाव रहने लगा है। इन सभी का प्रभाव हिंदी उपन्यास साहित्यपर हो रहा है। कृष्णा सोबती जी के 'समय सरगम', चित्रा मुद्गलजी के 'गिलिगडु', ममता कालिया जी के 'दौड़ ' जैसे उपन्यासों के माध्यम से यह बात प्रभावी रूप में सामने आ रही है। 'समय सरगम' उपन्यास के ईशान और आरण्या अपने अपने परिवारों से अलग होकर एक साथ जीवन जी रही रहे हैं। ईशान अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद और आरण्या पति की मृत्यु के बाद एक साथ रहते हैं। सुविधा और संपन्नता का संसार यहाँ भी है। ईशान और आरण्या के द्वारा लेखिका कुछ और जिंदगियों में प्रवेश करती है। 'समय सरगम' की कामिनी के भाई संपत्ति हड़पने के लिए अनेक षड्यंत्र रचते हैं। कामिनी अविवाहित है। वह अच्छी पोस्टिंग पर थी। उसके भाई नींद की गोलियों देकर उसे नींद में ही रखना चाहते हैं। इतनाही नहीं तो बिल्डरों को लाकर कामिनी का घर बेचने की हलचलें करते हैं। उसे घर से बाहर निकालकर अस्पताल रखना चाहते हैं। 'समय सरगम' की दमयंती की भी यही व्यथा है। दमयंती संपन्न परिवार की विधवा है। उसका खाना-पीना, बीमारी, दवा-पानी की ओर किसी का ध्यान नहीं है। उसे ड्राइंग रूम में बैठने की इजाजत नहीं दी जाती। आरण्या को अपनी व्यथा कहते हुए दमयंती कहती है, "बच्चों की ऐसी हरकतों से मेरा धीरज ख़त्म हो रहा है। फ़्लैट के कागज माँग रहा है बेटा। डॉक्टर के यहां गई थी तो पीछे से मेरा दीवान उठवा अपने कमरे में रख लिया। कहा, उसे पसंद है। सुनो, मुझे इस कमरे से निकलने की इजाजत नहीं। ड्राइंग रूम में अपने मेहमानों को बिठा नहीं सकती।"[3] दमयंती पुत्रों की संवेदनशून्यता को झेलती हुई अंत में रहस्यमय मौत मर जाती है। सफल उद्योगी प्रभु दयाल बेटों की जिंदगीयाँ सवारने के बाद खुद के लिए स्पेस चाहते हैं। बच्चों को खजाने की चाभी देने से इन्कार करते हैं । आखिर एक दिन गाड़ी से

लौटते समय वे रास्ते में स्वर्ग सिधर जाते हैं। पोस्टमार्टम की रिपोर्ट के अनुसार उनकी मृत्यु गला घोटने से हुई है।

चित्रा मुद्गल जी के 'गिलिगडु' उपन्यास के जसवंतसिंह पत्नी की मृत्यु के बाद अपनी अनुपयोगिता तथा उपेक्षा भाव के कारण कमजोर पड़ने लगते हैं। बेटे का घर उनका अपना घर नहीं रहता। वे अपनी भावनात्मक निर्भरता के लिए सुनगुनिया की ओर चले जाते हैं। उनके दोस्त कर्नल स्वामी का यथार्थ जसवंत सिंह से अलग नहीं है। उनका बेटा नारायण कर्नल स्वामी को नोएडा का फ्लैट बेचने के लिए दबाव डाल रहा है। जब वे मानने के लिए तैयार नहीं होते तब अंदर से दरवाजा बंद कर बहुत पीटता है। रोने-चीखने की आवाज सुनाकर पड़ोसी पुलिस को बुलाते हैं। कर्नल स्वामी भी सपने में अणि मादास के साथ भावनात्मक आधार ढूंढते हैं। अपने बच्चों द्वारा उपेक्षित प्रभुदयाल अपने रिश्ते की कलावती के पास जाते हैं। कलावती उनके लिए जीवन लता हो उठी। "रात खाने को बैठे तो कलावती के हाथ की फुली हुई फुल्कियाँ देखकर खुश हुए। लगा ही नहीं की कोई दूसरी औरत है। अपने ही परिवार द्वारा ठुकराए गए इन वृद्धों को संवेदनहीन होते चले परिवारों में जीने के लिए खुली मानवीय जमीन मिलती है।"4 ममता कालिया जी के 'दौड़' उपन्यास के सोनी साहब का लड़का उनकी मृत्यु के बाद दाह-कर्म करने नहीं आता। इसके विपरीत उसे अपने घर के वस्तुओं की चिंता लगी रहती है। पैसों के पीछे लगे बच्चों में संवेदनशीलता कमजोर पड़नी लगी है।

पति-पत्नी में से एक की मृत्यु हो जाने के बाद वृद्ध अपनी भावनात्मक निर्भरता खोजने लगते हैं। 'समय-सरगम' के ईशान और आरण्या की चेतना धन के लिए तथा अश्लीलता से युक्त नहीं है। ये दोनों अपने अनुभवों के साथ पके पुराने हुए हैं। ईशान पत्नी की मृत्यु के बाद अध्यात्म से जुड़ते हुए एक दूसरे में भावनात्मक आकर्षण ढूँढते हैं। बूढ़ों को घेरनेवाली असुरक्षा के कारण आज अनेक वृद्ध इकट्ठे आकर अपने जीवन को आत्मनिर्भर बना रहे हैं। शारीरिक आकर्षण की अपेक्षा भावनात्मक आधार ढूँढना चाहते हैं। अपने को बनाए रखाने की भावना उनमें होती है।

वैश्वीकरण में जहाँ हमारे नैतिक मूल्य गिर रहे हैं, वहाँ वैश्विक संस्कृति के प्रभाव के कारण कुछ अच्छे परिवर्तन नजर आ रहे है। पति अथवा पत्नी की मृत्यु के बाद भारतीय संस्कृति में फिर से शादी करने की बात नहीं है, लेकिन पाश्चात्य संस्कृति के कारण हमारे आचार-विचारों में परिवर्तन आने लगा है। वृद्ध अपने असुरक्षा के

भय से इसप्रकार से छुटकारा पाकर अपनी जिंदगी आत्मनिर्भर बनाना चाहते हैं तो इनमें कोई गैर नहीं दिखाई देता।

भारतीय संस्कृति में सच्चाई जैसे शाश्वत मूल्य को महत्वपूर्ण स्थान है। बचपन से बच्चों पर सच बोलने के संस्कार किए जाते है। अगर बच्चा झूठ बोले तो उसे सजा दी जाती है, लेकिन यह बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपने उत्पाद की खपत के लिए झूठ बोल रही हैं। ग्राहकों को अपने उत्पादों को गले मारने के लिए झूठ विज्ञापन निर्माण कर रही हैं। डिटर्जंट पाउडर के विज्ञापन में अपने पाउडर की जगह दूसरी कंपनी के पाउडर का उपयोग किया जाता और झाग निर्माण किया जाता है, क्योंकि उनकी पाउडर से झाग निर्माण नहीं होता। "डिटर्जंट के विज्ञापन में और भी अँधेर है। सोना डिटर्जंट की एड फिल्म जब शूट कर रहे थे तो सीवर्स के क्लीनर डिटर्जंट से हमने बाल्टी में झाग पैदा किया है।"5 ग्राहकों को मूर्ख बनाया जाता है। टूथपेस्ट का विज्ञापन करनेवाला खुद इसका इस्तेमाल नहीं करता। नई पीढी नैतिकता जैसे मूल्य को बिल्कुल दुर्लक्षित करना चाहती है। नैतिकता जैसे शब्द उन्हें कन्फ्यूजन फैलानेवाले लगते हैं। नाना प्रलोभन दिखलाकर ग्राहकों को जाल में फँसाया जाता है।

भारतीय संस्कृति में बाहरी चकाचौंध की अपेक्षा आत्मा की पवित्रता पर जादा बल दिया जाता है। भौतिक साधनों से मिलनेवाला समाधान अस्थायी होता है, आंतरिक समाधान चिरस्थायी होता है, यही हमारे संस्कृति की धारणा है। आज हम अपने संतुलित जीवन को छोड़कर विलासितापूर्ण जीवन की ओर भाग रहे हैं। न चाहते हुए पाश्च्यात्य संस्कृति की ओर हम खीचे जा रहे हैं। "मुझे यह बात किसी भी तरह नहीं जँचती थी कि अगर मैंने वुडलैण्ड के जूते नहीं पहने, पीटर इंग्लैंड की कमीज नहीं पहनी, जो एडिक की टाई नहीं लगाई, ली की पतलून नहीं पहनी, एंकर के कफलिंक नहीं लगाए, होल्ड स्पाईस या आफ्टर शेव नहीं थोपा और टाईटन की घडी नहीं बाँधी तो में कुछ कम आदमी हूँ या हो जाऊँगा।"6 स्वयंप्रकाश 'ईंधन' उपन्यास के रोहित के माध्यम से इसे स्पष्ट कर रहे हैं।

निष्कर्ष:

इसप्रकार हम देखते हैं कि वैश्वीकरण के कुछ अच्छे परिणाम सामने आने लगे हैं। गुणवत्ता और कीमत के आधार पर उत्पादकों के बीच स्पर्धा होने लगी है । सूचना, प्रौद्यौगिकी के कारण रोजगार के नए-नए अवसर निर्माण होने लगे। विदेशों में नौकरी के रास्ते खुल गए। शहरी और

ग्रामीण युवकों, मध्यवर्ग को प्राइवेट सेक्टर में रूपए न देते हुए नौकरियां मिलने लगीं। एक समय ऐसा था नौकरी की रिटायरमेंट के बाद मिले पैसों से आदमी घर बँधवता था, परंतु अब मध्य वर्ग का भी जीवनमान सुधर गया। वृद्धों के संबंध में कहा जाए तो अगर वे भावनात्मक आधार ढूँढकर असुरक्षा का भय दूर करना चाहता हैं तो इसमें कोई अनैतिक नहीं है।

दूसरी ओर वैश्वीकरण के कारण उपभोक्तावाद बढ़ गया। हमारी भारतीय संस्कृति के मूल्यों का ऱ्हास हो रहा है। झूठ बोलकर अपने उत्पाद को ग्राहकों के गले मारने की बात सहज हो गई है। संतुलित जीवन को छोड़कर विलासितापूर्ण जीवन की ओर हम ऐसे आकर्षित हो रहे हैं कि हम अपनी संस्कृति को भूल रहे हैं। असल में हमें अपनी परंपराओ, मूल्यों और जीवन पद्धति को वैश्विक संस्कृति के मूल्यों के साथ समायोजित करना होगा, परंतु अधिक हेर-फेर से मूल स्वरुप ही बदल न जाए, इस ओर भी ध्यान होगा। क्या उचित, क्या अनुचित इसकी तरफ ध्यान देना होगा। जो हितकर है उसे स्वीकारना होगा और जो अहितकर है उसे त्याग देना होगा। परंपरा से जकडे हमारे समाज को जीवन की इस वास्तविकता को स्वीकारने में थोडा समय लगेगा क्योंकि समय की तेजी के साथ हमारे विचार दौड़ते नहीं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1. संपा. ब्रजेन्द्र त्रिपाठी, समकालीन भारतीय साहित्य – भूमंडलीकरण विशेषांक, साहित्य अकादमी, वित्त विभाग नई दिल्ली, सन 2007, पृ. 201
2. सिंह राम गोपाल, वैश्वीकरण, मीडिया और समाज –नॅशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, सं. 2007, पृ.56
3. सोबती कृष्णा, समय सरगम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं 2001, पृ. 74
4. मुद्गल चित्रा गिलिगडु, सामायिक प्रकाशन, नई दिल्ली, सं.2007 पृ, 111
5. कालिया ममता, दौड़, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं 2005, पृ. 39
6. स्वयंप्रकाश, ईंधन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं 2004 ,पृ. 46